International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

राष्ट्रीय एकता में क्षेत्रीय साहित्य की भूमिकाः (हरियाणा के संदर्भ में)

अशोक कुमार
शोधार्थी, इतिहास, सामाजिक विज्ञान विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय अस्थल बोहर–124021, रोहतक

डॉ. कुमारी सुमन
शोध निर्देशिका, सहायक प्रोफेसर इतिहास, सामाजिक विज्ञान विभाग, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय अस्थल बोहर–124021, रोहतक

शोध सारः
हरियाणा का क्षेत्रीय साहित्य अपनी मूल प्रकृति में जनजीवन की सादगी, वीरता, श्रमशीलता और आत्मबलिदान को प्रतिबिंबित करता है। यहाँ की लोककथाओं, रागनियों, सांगों (लोकनाट्य), वीरगीतों और समकालीन कविताओं में न केवल ग्रामीण जीवन के भाव चित्रित हैं, बल्कि उनमें गहरे राष्ट्रभक्ति भाव, विदेशी सत्ता का विरोध, और स्वतंत्रता की तीव्र आकांक्षा भी अभिव्यक्त होती रही है। यह साहित्य भारत के स्वतंत्रता संग्राम से लेकर समकालीन राष्ट्र निर्माण तक की चेतना को अभिव्यक्त करता है। हरियाणवी लोक साहित्य, विशेष रूप से रागनी शैली, में 1857 के स्वतंत्रता संग्राम, भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, नेताजी सुभाष चंद्र बोस जैसे महान क्रांतिकारियों की वीरगाथाएँ गाई जाती रही हैं। ग्रामीण इलाकों में गाए जाने वाले लोकगीतों में गोरे साहबों के अत्याचार, खेती–बाड़ी की तबाही, और भारत माता की स्वतंत्रता की पुकार स्पष्ट दिखाई देती है। इन गीतों के माध्यम से स्वतंत्रता संग्राम की भावना गांव–गांव, घर–घर तक पहुँची और आमजन को एकजुट किया।[1]

मुख्य शब्दः हरियाणा का क्षेत्रीय साहित्य, राष्ट्रीय चेतना, लोककथा, लोकगीत, वीरगाथा, स्वतंत्रता आंदोलन, सामाजिक सुधार, स्त्री शिक्षा, भाषा संरक्षण, सांस्कृतिक गौरव, लोकभाषा, सांस्कृतिक, पहचान, राष्ट्रीय एकता, त्याग और बलिदान, सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक मूल्य, जनजागरण।

सांग परंपरा (हरियाणा का पारंपरिक लोकनाट्य) ने भी राष्ट्रीय मुद्दों को सांस्कृतिक मंच पर प्रस्तुत किया। इस मंच से वीर रस और देशभक्ति से परिपूर्ण संवादों, गीतों और प्रसंगों के माध्यम से लोगों में सामाजिक जागरूकता और राष्ट्रीय गौरव का भाव विकसित हुआ। लखमीचंद, जिन्हें हरियाणा का सूरदास कहा जाता है, ने अपने सांगों में न्याय, धर्म, सत्य और राष्ट्रीय अस्मिता को स्वर दिया। दयाचंद मयना, हरिनारायण व्यास, राजेंद्र बदगूजर, रामरती तंवर, जैसे रचनाकारों ने हरियाणवी भाषा में राष्ट्रवाद, सामाजिक सुधार, स्त्री शिक्षा, अस्पृश्यता विरोध और किसानों की चेतना पर केंद्रित साहित्य का निर्माण किया, जो हरियाणा

[1] कुलदीप सिंह, यादव (2020) *हरियाणा में राष्ट्रवाद और स्वतंत्रता संग्राम,* आर्यन पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ 289–296

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

में भाषिक और वैचारिक नवजागरण का प्रतीक बना। हरियाणा के स्वतंत्रता सेनानियों – जैसे राव तुलाराम, लाला लाजपत राय, पंडित नेकीराम शर्मा – की गाथाएं भी हरियाणवी साहित्य का अभिन्न हिस्सा बनीं। इन पर आधारित कविताएं और गीत आज भी राष्ट्रीय पर्वों, विद्यालयों, मेलों और संगोष्ठियों में गाए जाते हैं।[2]

हरियाणवी साहित्य में राष्ट्र चेतना केवल युद्ध या स्वतंत्रता संग्राम तक सीमित नहीं, बल्कि नारी शिक्षा, जाति उन्मूलन, ग्रामीण स्वराज्य, भाषा संरक्षण, और आर्थिक आत्मनिर्भरता जैसे विषयों तक विस्तृत है। वर्तमान में भी हरियाणा के अनेक युवा कवि और लोककलाकार पर्यावरण, सेना, किसान आंदोलनों, महिला सशक्तिकरण और सांस्कृतिक स्वाभिमान को लेकर राष्ट्रभक्ति और जागरूकता से परिपूर्ण रचनाएँ कर रहे हैं। अतः यह स्पष्ट है कि हरियाणा का क्षेत्रीय साहित्य केवल लोक जीवन का दर्पण नहीं, बल्कि राष्ट्र चेतना का ज्वलंत माध्यम है कृ जो अपने शब्दों, सुरों और स्वरूप के माध्यम से हरियाणवी जनमानस को राष्ट्रप्रेम, आत्मगौरव और सामाजिक जिम्मेदारी से जोड़ता आया है।[3]

हरियाणवी कवियों व लेखकों का योगदान

हरियाणवी साहित्य का मूल स्वर लोक जीवन की सच्चाई, सामाजिक यथार्थ और जनसंवेदना से जुड़ा रहा है। इस साहित्य को जीवंत, प्रभावशाली और जन–प्रिय बनाने में हरियाणवी कवियों और लेखकों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। इन रचनाकारों ने रागनी, सांग, किस्सागोई, लोकगीत, वीरगाथाओं और नाट्यशैली के माध्यम से समाज को न केवल मनोरंजन दिया, बल्कि शिक्षा, चेतना और राष्ट्रप्रेम का संदेश भी प्रसारित किया।

i. **पंडित लख्मीचंद (1901–1945):** हरियाणवी साहित्य की सबसे प्रखर प्रतिभाओं में अग्रणी, पंडित लख्मीचंद को "हरियाणा का सूरदास" कहा जाता है। उन्होंने हरियाणवी लोकनाट्य सांग को उच्च स्तर पर पहुँचाया। उनके सांगों में धार्मिक कथाएँ, सामाजिक समस्याएँ, नैतिक शिक्षा और राष्ट्रप्रेम का अद्भुत समन्वय मिलता है। उन्होंने सती सुलोचना, हरिश्चंद्र, हीर रांझा, गोपीचंद जैसे प्रसिद्ध सांगों की रचना कर लोकमन को गहराई से प्रभावित किया। उनकी भाषा सहज, प्रवाहपूर्ण और जनसुलभ थी, जिसने गाँव–गाँव में संस्कृति, आदर्श और सामाजिक चेतना को पहुँचाया।[4]

ii. **दयाचंद मयनाः** दयाचंद मयना हरियाणवी कविता और रागनी परंपरा के एक और प्रमुख स्तंभ हैं। उन्होंने किसान आंदोलन, वर्ग संघर्ष, दलित चेतना और सामाजिक समानता जैसे विषयों को अपनी रचनाओं में स्थान दिया। उनकी रचनाओं में आम

[2] कुलदीप सिंह, यादव (2020) *हरियाणा में राष्ट्रवाद और स्वतंत्रता संग्राम,* आर्यन पब्लिशिंग हाउस, पृष्ठ 289–296

[3] वही, 77–94

[4] विद्या निवास, शुक्ल (2008) *भारतीय साहित्य और राष्ट्रीय आंदोलन,* राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 256–269

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

आदमी की पीड़ा, स्त्री की आवाज़ और राष्ट्र के प्रति समर्पण का भाव स्पष्ट दिखाई देता है। वे हरियाणवी कविता को मंचीय परंपरा से हटाकर विचारधारा की दिशा में ले जाने वाले कवि माने जाते हैं[5]

iii. **हरिनारायण व्यासः** इनका साहित्य हरियाणा के ग्रामीण जीवन, शोषण के खिलाफ चेतावनी, सांस्कृतिक अस्मिता की रक्षा, और भाषा–प्रेम का स्वर लिए होता है। इन्होंने हरियाणवी बोली को केवल एक संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि रचनात्मक और वैचारिक साहित्य की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित किया।

iv. **रामरती तंवर, ओमप्रकाश कश्यप, राजेंद्र बदगूजरः** इन रचनाकारों ने समकालीन हरियाणा की सामाजिक समस्याओं – जैसे नारी उत्पीड़न, शिक्षा का अभाव, खेतिहर मजदूरों की स्थिति, राजनीति का पतन – को रचनात्मक अभिव्यक्ति दी। इनकी कविताएँ, कहानियाँ और नाटक हरियाणवी समाज के भीतर जागृति लाने वाले साहित्यिक उपकरण बने हैं।

v. हरियाणवी कवियों का योगदान केवल साहित्यिक नहीं रहा, बल्कि उन्होंने जनचेतना, राष्ट्रप्रेम, सामाजिक सुधार और सांस्कृतिक संरक्षण के लिए साहित्य को एक आंदोलन की तरह प्रयोग किया। उनकी रचनाएँ आज भी गाँवों के चौपालों, सांस्कृतिक मंचों और शिक्षण संस्थानों में जनजागरण का कार्य कर रही हैं।[6]

भाषा आंदोलन और सांस्कृतिक स्वाभिमान

भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं, बल्कि सांस्कृतिक पहचान, आत्मबोध और सामाजिक चेतना का वाहक होती है। भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र में भाषा न केवल संवाद का साधन रही है, बल्कि आंदोलनों, अस्मिता और आत्मसम्मान की भी प्रेरक रही है। यही कारण है कि भाषा आंदोलन भारत के स्वतंत्रता संग्राम के बाद भी राष्ट्र निर्माण, लोकतंत्र और सांस्कृतिक स्वाभिमान की प्रक्रिया में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात जब भारत को एक राष्ट्र के रूप में संगठित करने की प्रक्रिया शुरू हुई, तब सबसे बड़ा प्रश्न था – "भारत की राष्ट्रभाषा क्या होगी?"

इस पर बहस तीव्र थी। हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के पक्ष में अनेक आंदोलन हुए। गांधी जी, नेहरू, सुभाष चंद्र बोस जैसे नेताओं ने भारतीय भाषाओं की महत्ता को स्वीकारते हुए अंग्रेज़ी को हटाकर भारतीय भाषाओं को प्रशासनिक और शैक्षिक स्तर पर स्थापित करने की वकालत की। हिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी आंदोलन और दक्षिण भारत में तमिल व तेलुगु भाषाओं की अस्मिता रक्षा के लिए संघर्ष हुए।

तमिलनाडु में 1965 का भाषा आंदोलन इसका सबसे महत्वपूर्ण उदाहरण है, जहाँ हिंदी थोपे जाने के विरोध में मद्रास राज्य (वर्तमान तमिलनाडु) में भीषण जनआंदोलन हुआ। यह आंदोलन

[5] कृष्ण कुमार, सिंह (2011) *लोक साहित्य और भारतीय संस्कृति*, प्रभात प्रकाशन, पृष्ठ 334–378
[6] वही, पृष्ठ 76–94

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

केवल भाषा को लेकर नहीं था, बल्कि वह सांस्कृतिक वर्चस्व के विरुद्ध और स्थानीय अस्मिता की रक्षा के लिए था। यह घटना बताती है कि भाषा का प्रश्न केवल बोलने का नहीं, बल्कि सांस्कृतिक स्वाभिमान और आत्मगौरव का भी है। बांग्ला भाषा आंदोलन (1952, पूर्वी पाकिस्तान– अब बांग्लादेश) भी भाषा की अस्मिता और राष्ट्रीय पहचान का सशक्त उदाहरण है, जिसमें छात्रों ने अपनी मातृभाषा को राष्ट्रभाषा बनाने के लिए बलिदान तक दिया। यह आंदोलन एक स्वतंत्र राष्ट्र – बांग्लादेश – की स्थापना में परिणत हुआ, जो यह सिद्ध करता है कि भाषा किसी भी समाज की आत्मा होती है।[7]

हरियाणा, पंजाब, महाराष्ट्र, असम, उड़ीसा आदि राज्यों में भी क्षेत्रीय भाषाओं और बोलियों को मान्यता दिलाने के लिए जनचेतना उभरी। हरियाणवी, बज्जिका, मैथिली, गोंडी, बुंदेली जैसी बोलियों को संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल कराने के लिए आंदोलन आज भी जारी हैं, क्योंकि इन भाषाओं में न केवल साहित्यिक सृजन होता है, बल्कि ये जनभावना, लोकसंस्कृति और सांस्कृतिक आत्मबल को अभिव्यक्त करती हैं। सांस्कृतिक स्वाभिमान का सीधा संबंध भाषा से है, क्योंकि भाषा में ही संस्कृति सांस लेती है – चाहे वह लोकगीत, लोककथा, मुहावरे, पर्व, रीति–नीति हो। जब किसी भाषा को हाशिए पर डाला जाता है, तो उसके साथ जुड़ी संस्कृति और अस्मिता भी दबा दी जाती है। अतः भाषा की रक्षा, केवल भाषा की नहीं, सांस्कृतिक पहचान और स्वाभिमान की रक्षा भी है।

राष्ट्रीय एकता में क्षेत्रीय साहित्य की भूमिका

भारत, विविधताओं का देश है – भाषा, धर्म, जाति, संस्कृति और भौगोलिक भिन्नताओं से भरा हुआ। इस विविधता के बावजूद, भारत में सदियों से एक सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकता की भावना बनी रही है, जिसे सबसे प्रभावशाली रूप में क्षेत्रीय साहित्य ने संरक्षित और समृद्ध किया है। ये क्षेत्रीय भाषाओं में रचित साहित्यिक कृतियाँ न केवल स्थानीय संस्कृति की संवाहक रही हैं, बल्कि उन्होंने राष्ट्र के विचार को जनमानस में गहराई से स्थापित किया है।

i. **भाषाई विविधता में राष्ट्रीय भावनाः** भारत की 22 अनुसूचित भाषाओं और सैकड़ों बोलियों में रचा गया साहित्य यह सिद्ध करता है कि राष्ट्र केवल राजनीतिक इकाई नहीं, बल्कि भावनात्मक और सांस्कृतिक एकता का अनुभव है।[8]

बंगला में रवींद्रनाथ टैगोर, उर्दू में इक़बाल, तमिल में भरतिदासन, पंजाबी में पाश, मराठी में तिलक और सावरकर, हिंदी में भारतेंदु और प्रेमचंद, हरियाणवी में लखमीचंद – इन सभी ने अपनी–अपनी भाषाओं में राष्ट्र, स्वाभिमान, स्वतंत्रता और सांस्कृतिक अखंडता के स्वर बुलंद किए।

[7] प्रभात कुमार, मिश्र (2014) *स्वतंत्रता संग्राम और हिंदी कविता,* साहित्य भवन, पृष्ठ 58

[8] विष्णुकांत, अग्रवाल (2012) *हिंदी भाषी क्षेत्र और राष्ट्रीय एकता,* राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 70–93

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

ii. **क्षेत्रीय संस्कृति का राष्ट्र से संवादः** क्षेत्रीय साहित्य अपने–अपने क्षेत्र की सांस्कृतिक पहचान को प्रस्तुत करता है, लेकिन वह इन पहचानों को राष्ट्र की व्यापक छवि में जोड़ने का कार्य भी करता है। लोरियाँ, रागनियाँ, भजन, वीर गीत, जो हरियाणा या पंजाब की सीमाओं में जन्मे, वे स्वतंत्रता संग्राम में राष्ट्रीय भावना के वाहक बन गए।

iii. **सामाजिक समरसता और भाईचारे का संदेशः** क्षेत्रीय साहित्य अक्सर वंचित वर्गों, स्त्रियों, किसानों और मजदूरों की पीड़ा को स्वर देता है। यह सामाजिक विषमता के विरुद्ध आवाज़ उठाकर एक समावेशी राष्ट्रवाद को जन्म देता है।

कबीर, तुलसी, मीरा जैसे संत कवियों ने क्षेत्रीय भाषाओं में रचकर सामाजिक एकता और धार्मिक सहिष्णुता का ऐसा संदेश दिया जो कालजयी हो गया।

iv. **स्वतंत्रता संग्राम में एकता के सूत्रधारः** स्वतंत्रता संग्राम के समय, क्षेत्रीय साहित्य ने भाषा की दीवारों को तोड़कर राष्ट्रीय चेतना का स्वर फैला दिया।

वंदे मातरम् और जन गण मन – भले ही बंगाली में लिखे गए, किंतु पूरे भारत में राष्ट्रगान और राष्ट्रगीत बन गए।

विविधता में एकता की अभिव्यक्ति

भारत की सबसे बड़ी विशेषता उसकी विविधता में एकता की अवधारणा है। यह कोई नारा मात्र नहीं, बल्कि एक जीवंत सामाजिक–सांस्कृतिक वास्तविकता है, जो भाषा, धर्म, जाति, वेशभूषा, खानपान और परंपराओं की विविधताओं के बीच एक सांस्कृतिक तंतु के रूप में फैली हुई है। इस विविधता को बांधे रखने वाला सूत्र है – राष्ट्र की साझा चेतना, जो विभिन्न स्तरों पर प्रकट होती है।[9]

i. **सांस्कृतिक विविधता में एकत्वः** भारत में कश्मीर से कन्याकुमारी और गुजरात से अरुणाचल तक जीवनशैली, रीति–रिवाज, लोकगीत, उत्सव और कलात्मक अभिव्यक्तियाँ अलग हैं, परंतु सभी में एक सांझा भाव – "भारतीयता" विद्यमान है। चाहे उत्तर भारत का होली हो, दक्षिण भारत का पोंगल, पंजाब का बैसाखी हो या बंगाल का दुर्गापूजा – प्रत्येक पर्व भारत के विविध रंगों का उत्सव होते हुए भी एक राष्ट्रीय सांस्कृतिक पहचान का निर्माण करता है।

ii. **साहित्यिक अभिव्यक्ति में एकताः** क्षेत्रीय साहित्य इस विविधता को संजोने के साथ–साथ एकात्मक राष्ट्रबोध को भी मजबूत करता है।

तुलसीदास की रामचरितमानस हो या मीराबाई की भक्तिपूर्ण रचनाएँ,
गुरुनानक की बाणी हो या कबीर का निर्गुण भक्ति साहित्य, इन सबने भिन्न भाषाओं में लिखकर भी एक ही मूल्य – मानवता, प्रेम, भक्ति और समरसता को पुष्ट किया।[10]

---

[9] तिवारी, शंभुनाथ (2009). *भारत का सांस्कृतिक इतिहास.* राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ 229–234

[10] सुधीर, चौधरी (2016) *उपनिवेशवाद और भारतीय आत्मबोध,* विश्व पुस्तक माला, पृष्ठ 390

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

iii. **धर्मों में सहअस्तित्व का भावः** भारत में हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध, जैन, पारसी, यहूदी जैसे अनेक धर्मों के अनुयायी एक साथ रहते हैं। धार्मिक विविधता के बावजूद आपसी सम्मान, सह–अस्तित्व और सांझे पर्वों की परंपरा ने राष्ट्रीय एकता को जीवित रखा। ईद, क्रिसमस, गुरुपर्व, दीपावली आदि को सभी धर्मों के लोग आपसी सौहार्द से मनाते हैं।

iv. **लोकसंस्कृति और बोली में एकता का भावः** हरियाणवी, भोजपुरी, अवधी, मैथिली, मराठी, तमिल, तेलुगु जैसी बोलियाँ स्थानीय पहचान का वाहक होते हुए भी एक साझी संवेदना को अभिव्यक्त करती हैं – जैसे किसान की पीड़ा, स्त्री का संघर्ष, श्रमिक का श्रम, इत्यादि। इन लोकगीतों और कथाओं ने विभिन्न भाषाओं में एक ही भारतीय संवेदना को अभिव्यक्त किया।

v. **संविधान और लोकतंत्र में अभिव्यक्तिः** भारत का संविधान भी इस भावना का जीवंत प्रतीक है, जिसमें सभी धर्मों, भाषाओं और समुदायों को समान अधिकार दिए गए हैं। "भारत एक संप्रभु, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य" होने की घोषणा ही विविधता में एकता की औपचारिक अभिव्यक्ति है। विविधता में एकता केवल भारत की सांस्कृतिक शक्ति नहीं, बल्कि उसकी आत्मा है। यह एक ऐसी धारणा है, जो राष्ट्र को अनेक टुकड़ों में विभाजित होने से बचाती है और उसे सामूहिक चेतना, सहभागिता और सहिष्णुता की दिशा में प्रेरित करती है। यह अभिव्यक्ति जितनी कलाओं में दिखती है, उतनी ही गहराई से भारतीय साहित्य, लोक परंपराओं और नागरिक चेतना में भी विद्यमान है।

संस्कृति, भाषा व परंपराओं के माध्यम से राष्ट्रीयता

राष्ट्रीयता कोई एकरूपी अवधारणा नहीं है, बल्कि यह साझी संस्कृति, भाषिक अभिव्यक्ति और ऐतिहासिक परंपराओं का समुच्चय है, जो लोगों में एक सामूहिक पहचान और कर्तव्यबोध उत्पन्न करता है। भारत जैसे बहु–भाषिक और बहु–सांस्कृतिक देश में यह राष्ट्रीयता केवल संविधान या प्रशासन के आधार पर नहीं, बल्कि सांस्कृतिक चेतना, भाषिक जुड़ाव और परंपराओं की निरंतरता से निर्मित हुई है।

i. **संस्कृतिः भारत की आत्माः** भारत की संस्कृति में धर्म, दर्शन, कला, संगीत, नृत्य, शिल्प और जीवन पद्धति सम्मिलित हैं, जो देश के विभिन्न हिस्सों में भिन्न रूपों में प्रकट होते हुए भी एक साझी भारतीयता का बोध कराते हैं।

गंगा–जमुनी तहज़ीब, संस्कृत, फारसी, प्राकृत, तमिल, और पाली साहित्य, त्योहारों की साझी परंपरा (होली, दिवाली, ईद, गुरुपर्व) – ये सभी सांस्कृतिक बिंदु लोगों के बीच सांप्रदायिक और भाषिक भेदों को मिटाकर एक राष्ट्रबोध को जन्म देते हैं।[11]

ii. **भाषाः अभिव्यक्ति का सेतुः**

[11] वही, पृष्ठ 7–9

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

भाषा न केवल संवाद का माध्यम है, बल्कि यह चेतना, इतिहास और स्मृति की वाहक भी है।

हिंदी, तमिल, बंगला, मराठी, उर्दू, पंजाबी, असमिया, कन्नड़, तेलुगु आदि भाषाओं के साहित्य ने अपने–अपने क्षेत्र में राष्ट्र और समाज की पीड़ा, आकांक्षा और चेतना को स्वर दिया।

रवींद्रनाथ टैगोर, प्रेमचंद, भारतेंदु, भरतिदासन, निराला जैसे रचनाकारों ने भाषा को राष्ट्रीय चेतना का औजार बनाया।[12]

iii. **परंपराएं: स्मृति और उत्तरदायित्व की कड़ी:** भारतीय परंपराएँ – जैसे संयुक्त परिवार, अतिथि देवो भवः, नमस्कार की परंपरा, गुरु–शिष्य संबंध, तथा पंचायत व्यवस्था – हमारे सामाजिक ढांचे को जोड़ती हैं। ये परंपराएं क्षेत्रीय होते हुए भी एक राष्ट्र के रूप में भारत को जीवित रखती हैं।

लोकगीत, लोकनृत्य, रीतिरिवाज़, और धार्मिक उत्सवों में निहित मूल्य व्यक्ति को समूह और देश के प्रति उत्तरदायित्व का बोध कराते हैं।

iv. **स्वतंत्रता संग्राम में इन तीनों की भूमिका:** भारत के स्वतंत्रता संग्राम में भाषा, संस्कृति और परंपराओं ने भावनात्मक एकता का कार्य किया।

गीत, कविता, भजन और नाटक के माध्यम से जनमानस में राष्ट्रभक्ति जगी।

लोकनाट्य, नौटंकी, सांग आदि माध्यमों ने सांस्कृतिक प्रतिरोध और राष्ट्रीय गौरव को जन–जन तक पहुँचाया। संस्कृति, भाषा और परंपरा भारतीय राष्ट्रीयता की रीढ़ की हड्डी हैं। इन्हीं के माध्यम से व्यक्ति अपने समुदाय, अतीत और राष्ट्र से जुड़ता है। ये तीनों तत्व भारत को सिर्फ एक राजनीतिक इकाई नहीं, बल्कि भावनात्मक, सांस्कृतिक और सभ्यतागत राष्ट्र के रूप में परिभाषित करते हैं।

निष्कर्ष:

हरियाणा का क्षेत्रीय साहित्य अपने स्वरूप और उद्देश्य में केवल स्थानीय जीवन का दर्पण नहीं है, बल्कि यह राष्ट्रीय चेतना का सशक्त संवाहक भी है। यहाँ की लोककथाएँ, लोकगीत, लोकनाट्य, वीरगाथाएँ और समकालीन रचनाएँ स्वतंत्रता आंदोलन से लेकर आधुनिक भारत के निर्माण तक जनता की भावनाओं, संघर्षों और आकांक्षाओं को अभिव्यक्त करती रही हैं। इस साहित्य ने गाँव–गाँव, घर–घर में आजादी का संदेश पहुँचाया, विदेशी शासन के विरोध और स्वराज की भावना को जनमानस में जगाया, और सामाजिक सुधार तथा स्त्री शिक्षा जैसे मुद्दों को भी व्यापक रूप से उठाया। हरियाणा के कवियों और लेखकों कृ जैसे पंडित लखमीचंद, नायाब पानिपती, गंगाराम, रघुबीर सहाय, जगराम भ्यान, जसवंत सिंह, रतन सिंह आचार्य आदि — ने अपनी रचनाओं के माध्यम से न केवल वीरता, त्याग और बलिदान का

[12] वही, पृष्ठ 56–74

International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends (IJARMT)
An International Open Access, Peer-Reviewed Refereed Journal
Impact Factor: 6.4 Website: https://ijarmt.com ISSN No.: 3048-9458

गीत गाया, बल्कि जातीय एकता, सामाजिक न्याय, भाषा संरक्षण और सांस्कृतिक गौरव को भी प्रबल स्वर दिया। क्षेत्रीय भाषा और लोक परंपरा में रचित इन कृतियों ने राष्ट्रीय आंदोलन में सांस्कृतिक आधार प्रदान किया और स्वतंत्रता के बाद भी लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक जिम्मेदारी तथा राष्ट्रीय एकता को पोषित किया।

हरियाणा के क्षेत्रीय साहित्य की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही कि इसने स्थानीय सांस्कृतिक पहचान को राष्ट्रीय सरोकारों से जोड़ा। यहाँ की लोकभाषाओं, लोककथाओं और गीतों ने यह प्रमाणित किया कि भाषा और संस्कृति केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि राष्ट्रीय एकता, आत्मगौरव और सांस्कृतिक स्वाधीनता के रक्षक हैं। इस साहित्य में वर्णित त्याग, संघर्ष, सामूहिकता और सहयोग के मूल्य आज भी विद्यालयों, सांस्कृतिक आयोजनों और सामाजिक मंचों पर जीवित हैं। अतः स्पष्ट है कि हरियाणा का क्षेत्रीय साहित्य राष्ट्रीय चेतना के निर्माण और संवर्धन में निरंतर सक्रिय और प्रभावी भूमिका निभाता रहा है। इसने राष्ट्रीयता की जड़ों को जनजीवन की मिट्टी में गहराई से रोपा, जिससे भारत की सांस्कृतिक और राजनीतिक एकता और अधिक सुदृढ़ हुई। यह साहित्य केवल अतीत का गौरव नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी प्रेरणा का स्रोत है, जो समाज को जागरूक, संगठित और राष्ट्रहित के लिए प्रतिबद्ध बनाए रखने में सहायक है।